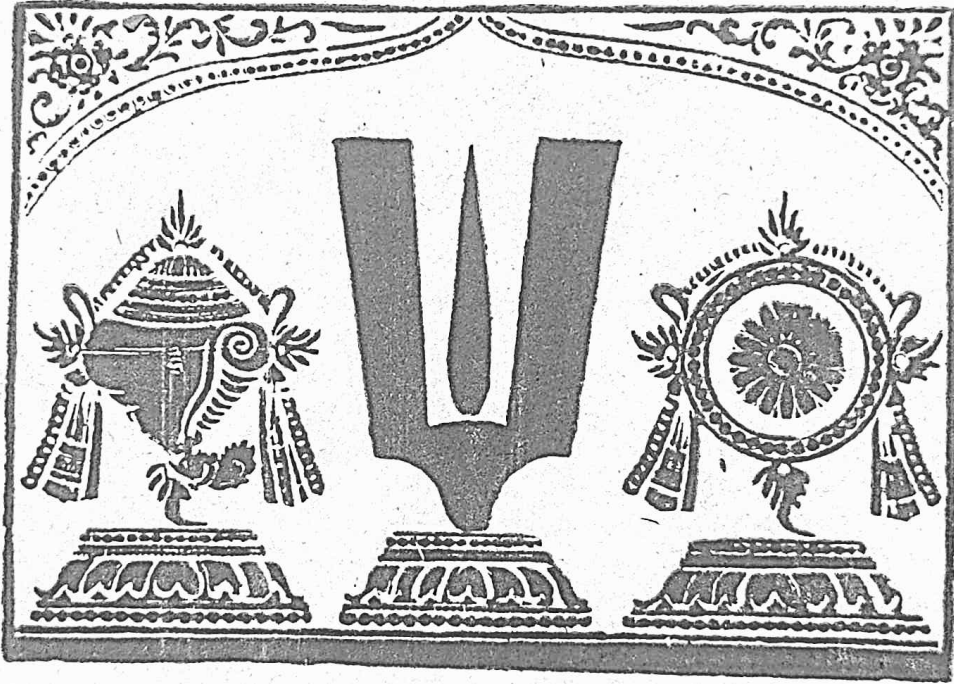


॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

श्री विजयराघव भगवते नमः श्री रङ्गदेशिकस्वामिने नमः

पञ्चसंस्कार पद्धतिः



संग्रहकर्ता

वै.वा.पं. श्रीदामोदर रामानुज श्रीनिवासदास

प्रकाशक :

श्रीराघवाचार्य शास्त्री

श्रीविजयराघव मन्दिर

मातगंड, श्रीअयोध्या जी

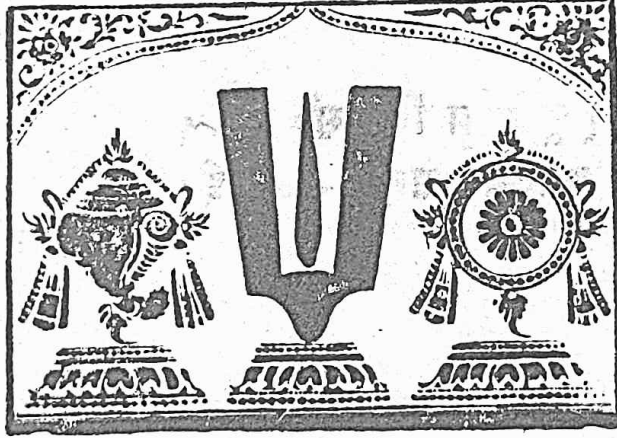
वि.सं. २०५७ शरत् पूर्णिमा १३ अक्टूबर २००० ई० दिन शुक्रवार

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

श्रीविजयराघव भगवते नमः

श्रीरङ्गदेशिकस्वामिने नमः

पञ्चसंस्कार पद्धतिः



संग्रहकर्ता

वै.वा.पं. श्रीदामोदर रामानुज श्रीनिवासदास

प्रकाशक :

श्रीराघवाचार्य शास्त्री

श्रीविजयराघव मन्दिर

मातंगड, श्रीअयोध्या जी

वि.सं. २०५७ शरत् पूर्णिमा १३ अक्टूबर २००० ई० दिन शुक्रवार

प्रकाशक :

श्रीराघवाचार्य शास्त्री

श्रीविजय राघव मन्दिर

मातगैड, श्रीअयोध्याजी

जिला-फैजाबाद (उ०प्र०)

पिन कोड-२२४१२३

पहली बार : शरत् पूर्णिमा वि० सं० २०५७

१३ अक्टूबर सन् २००० ई०

सर्वाधिकार सुरक्षित

मुद्रक :

सत् साहित्य प्रकाशन

तुलसी नगर, अयोध्या, फैजाबाद

दूरभाष : (०५२७८) ३२४३७

* श्रीमते रामानुजाय नमः *

निवेदनम्

ज्योतियों में सूर्य, प्रमाण में वेद, तीर्थों में गंगा, क्षेत्रों में बद्री नारायण, वैष्णवों में शम्भु, देवों में विष्णु जिस प्रकार श्रेष्ठ हैं उसी प्रकार श्रीवैष्णव धर्म ही श्रेष्ठ एवं मोक्ष का कारण है। इस धर्म में स्वोक्त अन्तरङ्ग संस्कारों में पञ्च संस्कार ही श्रेष्ठ हैं। इस लिए कि वैष्णवत्व सिद्धि में सर्व प्रथम कारण शङ्ख चक्र आदि धारण, द्वितीय श्रीचूर्ण के साथ भगवान् के चरण चिन्ह उर्ध्वपुण्ड्र का धारण, तृतीय भगवत् सम्बन्धी दासान्त नाम, चतुर्थ भगवत् स्वरूप एवं गुणों के प्रकाशक व्यापक मन्त्र का ग्रहण, पाँचवाँ है भगवत् समाराधन रूप याग संस्कार।

ये संस्कार भगवान् के अन्तरङ्ग सेवा में मनुष्य का अधिकार एवं योग्यता सिद्ध करने के कारण बनते हैं। यह शास्त्र की आज्ञा है।

इस धर्म को शास्त्र की विधि से अनुष्ठान करने के लिए एक प्रकाशित पद्धति की आवश्यकता है। इसलिए यह पञ्च-संस्कार पद्धति का पूर्वं संकलन प्रकाशित किया जा रहा है।

इस पञ्चसंस्कार पद्धति का संकलन पाञ्चरात्रआगम के भारद्वाज संहिता, बृहद्ब्रह्म संहिता एवं पराशरस्मृति, बृहहारीत स्मृति, पद्मपुराण आदि ग्रन्थों के आधार में किया गया है। इस पद्धति के संकलन कर्त्ता वं० वा० श्री पं० दामोदराचार्यजी ज्योतिषी हैं। वे श्री विजयराघव मन्दिर में वैदिक कर्मकाण्ड के निर्वाहक पुरोहित थे। वे वेद, कर्मकाण्ड, धर्मशास्त्र तथा संस्कृत साहित्य के अच्छे विद्वान् थे।

श्रीरामानुज सम्प्रदाय के श्रीवैष्णवों में पञ्चसंस्कार का महत्व सर्वविदित है क्योंकि ^{स्वाभिव्यक्त} पञ्चसंस्कार संस्कृत रहते हैं। इसमें दूसरा कारण यह भी है कि तापादि पञ्चसंस्कार वेद विहित परमवैदिक संस्कार हैं और धर्मशास्त्र इतिहास, पुराण तथा पाञ्चरात्र आगम से पूर्ण समर्थित हैं।

तीसरा कारण यह है कि विपक्षि द्वारा किये गये आक्षेपों का समाधान (खण्डन) के रूप में पूर्वाचार्यों के द्वारा अनेक विवेचनात्मक ग्रन्थ रत्न लिखे गये हैं। उदाहरण के लिये जैसे- “सुदर्शनसुरद्रुम”, “परिकर विजय”, “सच्चरित्र रक्षा”, “कुदृष्टिध्वान्तमार्तण्ड”, “संस्कारदीपक”, “भगवद्धर्मदर्पण”, “तप्तचकाङ्कनप्रमाण”, श्रीवैष्णवधर्म निर्णय “द्वन्द्वयुद्धसमीक्षा” इत्यादि हैं।

श्रीवैष्णवों के लिये ही नहीं, पढ़े-लिखे अन्य सम्प्रदायावलम्बीजनों के लिए भी उक्त ग्रन्थों से पारदर्शी अनुभव प्राप्त हुआ है।

इस पद्धति में पञ्चसंस्कार के विषय में श्रीसम्प्रदाय के आचार्यों द्वारा अनुष्ठित प्रक्रिया का अनुकरण किया गया है।

यद्यपि पाञ्चरात्र आगम के भारद्वाज संहिता आदि में पाँचों संस्कार (ताप, पुण्ड्र, नाम, मन्त्र तथा याग) का एक दिन में एक-एक संस्कार करके पाँच दिन में पाँच संस्कार पूरा करने का भी विधान है। कहीं पर समय के अभाव में एक दिन में सभी संस्कार क्रम से करने का भी विधान है। परन्तु पाँचों संस्कार पाँच दिन तक क्रम से अनुष्ठान करनेकी परम्परा इस समय देखने को नहीं मिलती।

अस्तु इस पद्धति में एक ही दिन में अनुष्ठान करने की विधि रखी गयी है।

अनुष्ठान के पूर्व कर्त्तव्य के रूप में प्रातःकाल गंगादि तीर्थों में स्नान, पुरुष का क्षीर कर्म यज्ञोपवीत दबलने के अनन्तर सन्धोपासन आदि कर लेना चाहिए।

क्योंकि नित्य कर्म करने के बाद द्विजातियों को अन्य धार्मिक कार्य करने का अधिकार प्राप्त होता है।

सामान्य संस्कार के समान विशेष पञ्चसंस्कार भी संस्कार होने के कारण अन्य कार्य में योग्यता के साधक होते हैं। पञ्चसंस्कार भगवत् आराधना में योग्यता के विरोधी पापों को नाश करके (पारमैकान्त्य धर्म) ऐकान्तिक भगवत्कैकर्य में निष्ठा एवं अधिकार प्राप्त कराते हैं। साथ ही देह और आत्मा के भी संस्कार होने से शरीर और आत्मा दोनों को क्लेश पवित्र करते हैं।

शरीर में वैदिक विधि से भगवान के शंख चक्र आदि का चिन्ह धारण करने से यमराज के दण्ड का भय नहीं रहता। क्योंकि यमदेव श्रीवैष्णवों के शासक नहीं हैं।

शंख चक्रादि भगवान के दौस हम है।

इस प्रकार के प्रपत्ति स्वरूप का प्रकाशक है। जिसका चिन्ह धारण करता है। उसी का वह वस्तु माना जाता है। जिस प्रकार राजपुरुष (सेना, पुलिस) को राजचिन्ह, राज-पोषाक धारण करने के पश्चात् राजकार्य करने का अधिकार प्राप्त होता है उसी प्रकार यह संस्कार भी भगवद्धर्म अनुष्ठान करने के लिए अनिवार्य रूप से धारण करने के लिए शास्त्र आज्ञा प्रदान करते हैं। 'देवता' के लक्षण चिन्ह स्वीकार करके देवाराधना करना चाहिए, ऐसा ही शास्त्र का विधान है।

लोक में भी पतिव्रता स्त्रियों के पातिव्रत्य धर्म के अनुष्ठान के लिये चूड़ी, मङ्गलसूत्र, सिंदूररेखा, आभूषण सधवा के योग्य वस्त्र आदि पति के वाह्यलक्षण (चिन्ह) को धारण करना

आवश्यक होता है। मन का भाव भी पति के लिए अव्यभि-
चारी, अनुकूल तथा शुद्ध होना चाहिए। यह केवल लौकिक
प्रक्रिया मात्र नहीं है शास्त्र बिधि का ही अनुष्ठान है।

उसी प्रकार परमेश्वर के विषय में भी बाह्य चिन्ह शंख
चक्रादि धारण है। आन्तरिक चिन्ह विषय में वैराग्य के साथ
भगवत् प्रेम है। ऐसा ही शास्त्र आज्ञा करते हैं। 'बाह्य तु
शङ्ख चक्राभ्यामान्तरो वीतरागतः' ये दोनों लक्षण भगवद्भक्त
अथवा प्रपन्न के लिए आवश्यक है।

इन संस्कारों के अनुष्ठान के लिए मुद्रित 'पञ्चसंस्कार
पद्धति' पुस्तक का होना आवश्यक था।

अतः इस आवश्यकता को पूर्ण करने के लिये श्री स्वामी
जी महाराज ने पुस्तक का प्रकाशन किया है। यह पद्धति
भगवत् आचार्यों से अनुज्ञाग्रहण से प्रारम्भ होकर विश्वक्सेन,
आराधना, पुण्यावाचन, रक्षाबन्धन पञ्चगव्यप्राशन, ब्रह्मादि
पूजन, हवन, आयुधार्चन पञ्चसंस्कार का अनुष्ठान, उत्तर
हवन, शरणागति अनुष्ठान (आत्मरक्षा का भार समर्पण) शिष्यों
के लिए व्रत तथा नियमों का उपदेश आदि आवश्यक विषय
समाहित है।

जयाहोम, राष्ट्रभूद्होम तथा प्रायश्चित्तहोम के विकल्प में
जो विधि अपनायी गई है उसके तत् तत् स्थलों में विकल्प
उल्लिखित है। जो अति संक्षिप्त करना चाहते हैं उनके लिए उक्त
विकल्प है। आकार में लघु होने पर भी यह पुस्तक अपने गुणों
से श्री वैष्णवों के सेवामें उपयोगी बनें यह शुभाशंसा करते हैं।

निवेदक :

श्री श्रीनिवास रामानुज दास

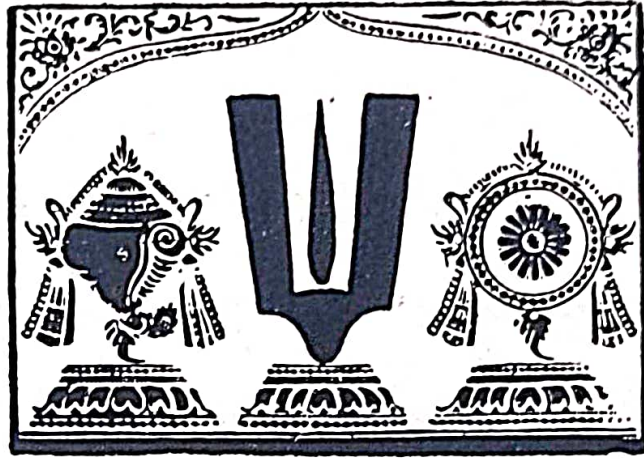
वेदान्त विभागाध्यक्षः

श्रीश्रिदण्डदेव सं० महाविद्यालयस्य

विषयानुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृ० सं०
१-	अनुज्ञाप्रकारः	१
२-	श्रीविश्वक्सेनपूजनम्	२
३-	महासंकल्पः	३
४-	पुण्याहवाचनप्रयोगः	४
५-	पञ्चमव्यप्राशनम्	१५
६-	रक्षाबन्धनम्	१६
७-	अग्निस्थापनम्	१६
८-	ब्रह्मपूजनम्	१८
९-	हवनप्रकारः	२०
१०-	दिव्यायुधर्चनम्	२०
११-	विष्णुसूक्त होमः	२३
१२-	पुरुषसूक्त होमः	२५
१३-	संस्कारानुष्ठानम्	२७
१४-	जयाहोमः	२८
१५-	अभ्यातानहोमः	३०
१६-	राष्ट्रभृद्होमः	३१
१७-	स्विष्टकृद्होमः	३३
१८-	प्रायश्चित्तहोमः	३३
१९-	ब्रह्मोद्वासनम्	३४
२०-	अग्न्युद्वासनं विसर्जनं च	३४
२१-	शरणागतिः	३५
२२-	उपदेशः	३६

॥ श्रीविजयराघव भगवते नमः ॥ ॥ श्रीरङ्गदेशिकस्वामिनेनमः ॥
॥ श्रीमतेरामानुजाय नमः ॥



अथ पञ्च संस्कार विधिः

卐 अथानुज्ञा प्रकार 卐

नमः सदसे नमः सदसस्पतये नमः सखीनां पुरोगानां
चक्षुषे नमो दिवे नमः पृथिव्यै सप्रथसभां मे गोपाय
ये च सभ्याः सभासदस्तानिन्द्रियावतः कुरु सर्वमायुरुपा-
सताम् । ॐ सर्वेभ्यः श्रीवैष्णवेभ्यो नमः । इति
श्रीवैष्णवशिरस्सु पुष्पाक्षतान् विकिरेत् । तत अञ्जलि
कृत्वा प्रार्थयेत्—अशेषेह परिषत्— स्वामिनः
भवत्पादमूले मया समर्पितामिमां सौवर्णीं दक्षिणां मल्पी-
यसीमपि यत्किञ्चिद्दक्षिणां यथोक्तदक्षिणामिव स्वो-
कृत्य गोत्रस्य शर्मणः अस्य दासस्य श्रीमन्नारायणदास्य-
सिद्ध्यर्थं दृष्टादृष्टपरिपूर्यर्थं भगवद्ज्ञानविवृद्ध्यर्थमेनं
पञ्चसंस्कारकर्मणा संस्कर्तुं योग्यतासिद्धिरस्तु इति
भवन्तो महान्तोऽनुगृह्णन्तु । योग्यतासिद्धिरतु इति प्रति-
बचनम् । दर्भेष्वासीनः, दर्भान् धारयमाणः पवित्रपाणिः

प्राणानायस्य प्रारिप्सितस्य कर्मगोनिर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थम्
आद्रौ विष्वक्सेनाराधनं करिष्ये इति सङ्कल्प्य द्वादशकुश-
पत्रनिर्मितं कूर्चं पत्रपुटके निक्षिप्य-तद्यथा-हस्तेऽक्षतपुष्पाणि
गृहीत्वा ध्यायेत् । विष्वक्सेनं सपरिवारं ध्यायामि,
आवाहयामि ।

卐 अथ श्रीविष्वक्सेनपूजनम् 卐

ॐ विष्वक्सेनं सकलविवुधप्रौढसेनाधिनाथं मुद्राचक्रे-
करयुगधृतं शङ्खदण्डौ दधानम् । मेघश्यामं समणिमुकुटं
पीतवस्त्रं शुभाङ्गं ध्यायेद्देवं दलितदनुजं सूत्रवत्यां
समेतम् ॥१॥ यस्य द्विरदबक्त्राद्याः पारिषद्याः परः
शतम् । विघ्नं निघ्नन्ति भजतां विष्वक्सेनं तमाश्रये ॥२॥
दिव्याकारं सरोजाक्षं शङ्खचक्रगदाधरम् । मुकुन्दद्वार-
निलयं विष्वक्सेनं तमाश्रये ॥३॥ श्रीरङ्गचन्द्रमसमिन्दि-
रयाविहर्तुं विन्यस्य विश्वचिदचिन्नयनाधिकारम् । यो
निर्वहत्यनिशमङ्गुलिमूद्रयैव सेनान्यमन्यविमुखास्तमुशि-
श्रयामः ॥४॥ वन्दे वैकुण्ठसेनान्थं देवं सूत्रवतीसखम् ।
यद्वेत्रशिखरस्पन्दे विश्वमेतद्ब्यवस्थितम् ॥५॥ इति
सम्प्रार्थ्य "श्रीमते विष्वक्सेनाय नम इति मंत्रेणासनाद्युप-

चारैः षोडशोपचारैः सूत्रवतीसहितं श्रीविष्वक्सेनं
 सम्यक्प्रपूज्य महासङ्कल्पं कुर्यात् । आसनं
 समर्पयामि अर्घ्यं समर्पयामि पाद्यं समर्पयामि आचमनं
 समर्पयामि स्नानं समर्पयामि स्नानानन्तरमाचमनं समर्प-
 यामि वस्त्रार्थमक्षतान् समर्पयामि यज्ञोपवीतार्थमक्षतान्
 समर्पयामि गन्धान् चन्दनं समर्पयामि पुष्पाणि समर्पयामि
 धूपं समर्पयामि दीपं समर्पयामि फलं निवेदयामि सर्वो-
 पचारान् समर्पयामि ।

卐 अथ महासङ्कल्पः 卐

श्रीगोविन्द गोविन्द गोविन्द श्रीमद्भगवतो महापुरुष-
 स्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तिमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपराद्धे श्री-
 श्वेतवाराहकल्पे बैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे युगे कलि-
 युगे कलिप्रथमचरणे मेरोर्दक्षिणदिग्विभागे श्रीमल्लवणाब्धे-
 रुत्तरदिग्विभागे भूलोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे
 आय्यावर्त्तान्तांगतब्रह्मावर्त्तकदेशे प्रजापतिक्षेत्रे अमुकतीर्थे
 वा विक्रमशाके बौद्धावतारे षष्ठिसम्बत्सराणां मध्येऽमुक-
 सम्बत्सरेऽमुकायनेऽमुकऋतौ अमुकमासेऽमुकपक्षेऽमुकतिथौ

अमुकवासरेऽमुकनक्षत्रेऽमुकराशिस्थिते देवगुरौ अमुक-
 राशिस्थिते श्रीसूर्येऽमुकराशिस्थिते श्रीचन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु
 यथा यथा राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशे-
 षणविशिष्टायामस्यां शुभपुण्यतिथौ श्रीमन्नारायणप्रीत्यर्थं
 भगवदाज्ञयाभगवत्कैकर्यरूपमस्य दासश्च (एषां दासानां
 वा) पञ्चसंस्कारकर्म करिष्ये । इति सङ्कल्प्य
 विष्वक्सेनं यथास्थानं प्रतिष्ठापयामि इति विष्वक्सेन-
 मुद्रासयेत् ॥

॥ पुनःप्राणानायम्य पुण्याहवाचनं कुर्यात् ॥

ॐ अथ पुण्याहवाचनप्रयोगः ॐ

तत्रादौकलशस्थापनविधिनारजतमयंताम्रमयं मृण्मयं वा
 यथासम्भवं कलशं संस्थाप्य पुण्याहं वाचयेत् । तद्यथा—ॐ
 महीद्यौः पृथिवीचनऽइमं यज्ञमिमिक्षताम् । पिपृतान्नो
 भरीमभिः । इतिभूमिं स्पृष्ट्वा । ॐ ओषधयः समवदन्त
 सोमे न सहराज्ञा । यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तं राजन्पार-
 यामसि । इति भूमौ तण्डुलान् क्षिपेत् । ॐ आजिघ्र-
 कलशं मह्यात्वा विवशन्तिवन्दवः । पुनरुज्जा निवर्त्तस्व
 सा नः सहस्रं धृक्ष्वोरुधारापयस्वती पुनर्मम विवशताद्रयिः

॥ इति तण्डुलानामुपरि कलशं स्थापयेत् । ॐ ववरुणस्यो-
 त्तम्भनमसि ववरुणस्य स्कम्भसज्जनीस्थो ववरुणस्यऽऋत-
 सदन्त्यसि ववरुणस्यऽऋतसदनमसि ववरुणस्यऽऋतसदन-
 मासीद । इति कलशे जलं पूरयेत् । ॐ त्वाङ्गधवर्वा-
 ऽअवन्तस्त्वा मिन्द्रस्त्वाम्बृहस्पतिः । त्वामोषधेसोमोराजा
 विद्वान्त्यक्षमादमुच्यत । इति कलशे गन्धं क्षिपेत् । ॐ
 याऽओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगम्पुरा । मनैनु
 बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च । इति कलशे
 सर्वाँषधीः क्षिपेत् । ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः
 परुषस्परि । स एवानो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ।
 इति कलशे दूर्वाङ्कुराणि प्रक्षिपेत् । ॐ अश्वत्थेवो
 निषदनं पण्णेवो वसतिष्कृता । गोभाजऽइतिकलासथ
 यत्सनवथ पूरुषम् । इति कलशे पञ्चपल्लवान्
 क्षिपेत् । ॐ श्योना पृथिवी नो भवान्नृक्षरा निवेशनी ।
 यच्छानः शर्म सप्रथाः । इतिकलशे सप्तमृदः क्षिपेत् ।
 ॐ याः फलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्च पुष्पिणीः ।
 बृहस्पतिप्रसूता स्तानो मुञ्चन्त्वं ह सः । इति कलशे
 पूगीफलं क्षिपेत् । ॐ परिव्राजपतिः कविरग्निर्हव्यान्त्य-

क्रमीत् । दधद्दरत्नानि दाशुषे । इतिकलशेपञ्चरत्नानि
 क्षिपेत् । ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः
 पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवी द्यामुतेमाङ्गस्मै देवाय
 हविषा विवधेम । इति कलशे हिरण्यमुद्रां क्षिपेत् । ॐ
 पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्व्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छि-
 द्रेण पवित्रेण सूर्य्यस्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपते
 पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् । इति मंत्रेण द्वादश-
 कुशपत्रनिर्मितं कूर्चं कलशे क्षिपेत् । ॐ युवा सुवासः
 परिवीतऽआगात्सऽ उ श्रेयान् भवति जायमानः । तं
 धीरासः कवयऽउन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः । इति
 कलशं युग्मवस्त्रेण वेष्टयेत् । ॐ पूर्णा दर्व्वी परापत
 सुपूर्णा पुनरापत । व्वस्नेव विवक्रीणावहाऽइषमूर्ज्जं
 शतक्रक्तो । इति कलशोपरिपूर्णपात्रं न्यसेत् । ॐ यः फलि-
 नीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्च पुष्पिणीः बृहस्पति प्रसूता
 स्तानो मुञ्चन्त्वं ह सः । इति पूर्णमात्रोपरि नारिकेलफलं
 न्यसेत् । एवं विधिना पुण्याहकलशं संस्थाप्य हस्तेऽक्षत
 पुष्पाणि गृहीत्वा वरुणरूपिणं भगवन्तं कलशे आवाह्य
 पूजयेत् । ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणाव्वन्दमानस्तदाशास्ते

यजमानोहविभिः । अहेडमानो व्वरुणेहवोध्युरुशं समान-
 ऽआयुः प्रमोषीः ॥१॥ ॐ इमम्मे व्वरुणश्श्रुधि हवमद्या
 च मृडय । त्वामवस्युराचके ॥२॥ इति अस्मिन् कुम्भे
 व्वरुणं साङ्गं सपरिवारं सशक्तिकमावाहयामि । ॐ
 भूर्भुवः स्वः अपांपतिव्वरुणाय नमः । इति मंत्रेण
 आसनादिषोडशोपचारैः (आसनं, अर्घ्यं, पाद्यं, आचमनं,
 सफलताम्बूलं सुवर्णपुष्पं, नीराञ्जनं, मंत्रपुष्पाञ्जलि,
 सर्वोपचारान् समर्पयामि) व्वरुणं सम्पूज्य गङ्गाद्यावाहयेत् ।
 यथा—ॐ सर्वे समुन्द्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः ।
 आयन्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः ॥१॥ कलशस्य मुखे
 विष्णुः कण्ठेरुद्रः समाश्रितः । मूलेतस्य स्थितोब्रह्मामध्ये
 मातृगणाःस्मृताः ॥२॥ कुक्षौ तुसागराः सप्त सप्तद्वीपावसु-
 न्धराः । ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ॥३॥
 अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ॥ इत्या-
 वाहनम् । ततः तुलसीपुष्पाणि हस्ते गृहीत्वा प्रार्थयेत् ।
 ॐ देवदानवसम्वादे मथ्यमाने महोदधौ । उत्पन्नोऽसि
 तदा कुम्भोविधृतो विष्णुना स्वयम् ॥१॥ त्वत्तोये सर्वती-
 र्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः । त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि

त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ॥२॥ शिवः स्वयं त्वमेवासि-
 विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः । आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः
 सपैतृकाः ॥३॥ त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः
 त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव ॥४॥ सान्निध्यं
 कुरु मे देव प्रसन्नोभव सर्वदा । नमो नमस्ते स्फटिक प्रभाय
 सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय । सुपाशहस्ताय श्मषासनाय
 जलाधिनाथाय नमो नमस्ते । पाशपाणे नमस्तुभ्यं पद्मि-
 नीजीवनायक । पुण्याहवचनं यावत्तावत् त्वं सन्निधो-
 भव इति प्रार्थना । इति कलशस्थापनविधिः । पुनरा-
 चम्य प्राणानायम्य सङ्कल्पं कुर्यात् । तद्यथा—भगवदा-
 ज्ञयाभगवत्कैकर्यत्वेन अस्मिन् पञ्चसंस्कारकर्मणि
 सर्वोपकरणशुद्ध्यर्थं, शरीरशुद्ध्यर्थं, गृहशुद्ध्यर्थं च पुण्या-
 हवाचनं करिष्ये । इति सङ्कल्प्य, तदर्थं यथानामगोत्रान्
 चतुरो ब्राह्मणान् अहं वृणो । इति वृणुयात् । वृताः स्मः
 इति ते प्रतिब्रूयुः । ततश्चतुरो ब्राह्मणान् श्रीवैष्णवान्
 दर्भहस्तान् पुरतः प्रतिष्ठाप्य—ब्राह्मणानां हस्ते सुप्रोक्षि-
 तादिकं कार्यम् । शिवा आपः सन्तु—इति जलम् । ॐ
 सन्तु शिवा आपः । सौमनस्यमस्तु इति पुष्पम् । ॐ अस्तु

सौमनस्यम् । अक्षतं चारिष्टं चास्तु—इति अक्षतान् । ॐ
 अस्त्वाक्षतमरिष्टं च । गन्धाः पान्तु सौमङ्गल्यं चास्तु—
 इति भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐ गन्धाः पान्तु सौमङ्गल्यं
 चास्तु । अक्षताः पान्तु आयुष्यमस्तु—इति भवन्तौ
 ब्रुवन्तु । ॐ अक्षताः पान्तु आयुष्यमस्तु । पुष्पाणि पान्तु
 सौश्रीयमस्तु—इति भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐ सफलताम्बूलानि
 पान्तु एश्वर्यमस्तु । दक्षिणाः पान्तु बहुधनमस्तु—इति
 भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐ दक्षिणाः पान्तु बहुधनमस्तु । पुन-
 रत्रापः पान्तु स्वर्चित मस्तु—इति भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐ
 पुनरत्रापः पान्तु स्वर्चितमस्तु । ततः श्रीवैष्णवान्
 ब्राह्मणान् प्रणम्य अवनिकृतजानुमण्डलः कमलमुकुलसदृश-
 मञ्जलिं शिरसि कृत्वा वृतब्राह्मणान् प्रार्थयेत् । कर्त्ता—
 व्रतजपनियमतपःस्वाध्यायक्रतुशमदयादानविशिष्टानां
 ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम्—इति ब्रूयात् । समाहित-
 मनसस्मः इति ते विप्राः प्रतिब्रूयुः । कर्त्ता—प्रसीदन्तु ।
 भवन्तः । विप्राः—प्रसन्नाः स्मः । कर्त्ता—भवद्भिरनुज्ञातः
 पुण्याहं वाचयिष्ये । विप्राः—वाच्यताम्-३ । इति अनुमते
 पुण्याहकलशं सव्यहस्ते निधाय दक्षिणेन हस्तेन पिधाय
 ब्राह्मणैर्वाचयेत् ।

ततो यजमानस्य हस्तस्थं पुण्याहघटं ब्राह्मणा स्वहस्त-
स्थ-दर्भाग्रभागैः स्पृशन्त एवं ब्रूयुः—

दर्भैः स्पृशन्तु कलशं ब्राह्मणैः सह देशिकः ।
ततश्च शुद्धिमन्त्रांस्तु पठेदेवं समाहितः ॥१
शुद्धये ऽस्तु परो देवो वासुदेवोऽस्तु शुद्धये ।
सङ्कर्षणः शुद्धयेऽस्तु प्रद्युम्नश्चास्तु शुद्धये ॥२
शुद्धयेऽस्त्वनिरुद्धोऽपि शशवश्चास्तु शुद्धये ।
नारायणोऽस्तु विश्वेश शुद्धये सर्वकर्मणाम् ॥३
शुद्धये माधवश्चास्तु सर्वलोकहिते रतः ।
गोविन्दः शुद्धये चास्तु परमात्मा सनातनः ॥४
शुद्धये विष्णुरस्त्वाद्यः शुद्धये मधुसूदनः ।
सर्वलोक-हितो देवः शुद्धयेऽस्तु त्रिविक्रमः ॥५
वामनः शुद्धये चास्तु श्रीधरोऽद्यास्तु शुद्धये ।
शुद्धयेऽस्तु हृषीकेशः पद्मनाभोऽस्तु शुद्धये ॥६
सदा दामोदरो देवः शुद्धयेऽस्तु जगत्पतिः ।
शुद्धये पद्मनाभोऽस्तु शुद्धयेऽस्तु सदा ध्रुवः ॥७
अनन्तः शुद्धये चास्तु शक्त्यात्मा चास्तु शुद्धये ।
सर्वकर्मसु चैवास्तु शुद्धये मधुसूदनः ॥८
सदा विद्याधिदेवीऽस्तु शुद्धये कपिलस्तथा ।
शुद्धये विश्वरूपोऽस्तु शुद्धयेऽस्तु विहङ्गमः ॥९

क्रोडात्मा शुद्धये चास्तु शुद्धये वडवानलः ।

शुद्धयेऽस्तु सदा धर्मश्चास्तु वागीश्वरस्तथा ॥१०

देव एकार्णवशयः शुद्धयेऽस्तु निरन्तरम् ।

शुद्धयेऽस्तु सदा देवः कूर्मः पातालधारकः ॥११

वराहः शुद्धये चास्तु नारसिंहोऽस्तु शुद्धये ।

अमृताहरणश्चास्तु शुद्धये सर्वकर्मणाम् ॥१२

श्रीपतिः शुद्धये चास्तु शान्तात्मा चास्तु शुद्धये ।

शुद्धये राहुजिच्चास्तु कालनेमिघ्न एव च ॥१३

पारिजातहरश्चास्तु लोकनाथोऽस्तु शुद्धये ।

सर्वत्र शुद्धये चास्तु दत्तात्रेयो महाप्रभुः ॥१४

न्यग्रोधशायी भगवान् शुद्धये चास्तु सर्वदा ।

एकशृङ्गतनुश्चास्तु वामनश्चास्तु शुद्धये ॥१५

त्रिविक्रमः शुद्धयेऽस्तु शुद्धयेऽस्तु नरः सदा ।

नारायणः शुद्धयेऽस्तु हरिः कृष्णश्च शुद्धये ॥१६

ज्वलत्परशुधृग्रामः शुद्धयेऽस्तु धनुर्धरः ।

रामश्च शुद्धये चास्तु वेदविद् भगवांस्तथा ॥१७

शुद्धयेऽस्तु सदा कल्की सर्वदोषक्षयङ्करः ।

शुद्धयेऽस्तु सदा देवः पातालशयनः प्रभुः ॥१८

शुद्धये सन्तु सर्वेषां सर्वे सर्वत्र सर्वदा ।

एते सर्वे सदा देवाः शान्तये सन्तु पूजिताः ॥१९

ऋद्धये पुष्टये सन्तु सिद्धये भक्तयेऽपि च ।
 शिवाय मुक्तये सन्तु वृद्धये सर्वकर्मणाम् ॥२०॥
 मन्त्राणां देशिकानाञ्च स्थानानामपि सर्वदा ।
 पुत्रमित्रकलत्राणां दासीदासगवामपि ॥२१॥
 वेदशास्त्रागमादीनां वृत्तानामिष्टसम्पदाम् ।
 मनोरथानां सर्वेषां हितानां सन्तु सर्वदा ॥२२॥
 आयुरासौख्यमेधानां धनधान्यादिसम्पदाम् ।
 पुण्यानामणिमादीनां गुणानां श्रेयसामपि ॥२३॥
 सज्जो जनपदस्यापि यजमानस्य मन्त्रिणाम् ।
 वैष्णवानां विशेषेण परत्र हितमिच्छताम् ॥२४॥
 पञ्चकालविशुद्धानां सत्वस्थानां शुभात्मनाम् ।
 स्वस्त्यस्तु च शिवञ्चास्तु शुभञ्चास्तु पुनः पुनः ॥२५॥
 अविघ्नमनिशं चास्तु दीर्घमायुष्यमस्तु वै ।
 समाहितं मनश्चास्तु संपदश्चोत्तरोत्तरम् ॥२६॥
 पुण्याहं शुद्धये चास्तु वासुदेवादिमूर्तयः ।
 शङ्खचक्रगदापद्मयुक्तः सर्वेश्वरेश्वरः ॥२७॥
 प्रीयतां भगवान् देवो लाङ्गली प्रीयतां सदा ।
 प्रह्नुमनः प्रीयतां नित्यमनिरुद्धः सुरेश्वरः ॥२८॥
 नारायणः सुरेशोऽपि कर्मणां पूरणाय च ।
 न्यूनाधिकानां शान्त्यर्थं प्रीयतां प्रीयतां विभुः ॥२९॥

पुण्याहं स्वस्ति ऋद्धि च संवाच्य सहितो द्विजैः ।

आत्मानं प्रोक्षयेत् पश्चाद्यागोपकरणानि च ॥३०

येन देवा पवित्रेणेत्यादिमन्त्रान् पठन् गुरुः ।

एवं सर्वेषु यागेषु कुर्यात् पुण्याहवाचनम् ॥३१

अथ तज्जलं किञ्चिन्निष्काश्य घटं पूर्ववत् स्थापयित्वा तज्जलेन आम्रपल्लवकूर्चादिभिः स्वं यागोपकरणानि गृहादिकञ्च प्रोक्षयेत् ओम् येन देवाः पवित्रेण आत्मानं पुनते सदा । तेन सहस्रधारेण पावमान्यः पुनातु माम् ॥ इति ॥

—:०:—

कर्त्ता—अस्मिन् पञ्चसंस्कारकर्मणि पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु । विप्राः—पुण्याहमस्तु । कर्त्ता—पञ्चसंस्कारकर्मणोस्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु । विप्राः—स्वस्ति कर्मणेऽस्तु । कर्त्ता—पञ्चसंस्कारकर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु । विप्राः—कल्याणमस्तु । कर्त्ता—पञ्चसंस्कारकर्मणः ऋद्धि भवन्तो ब्रुवन्तु । विप्राः—ऋद्धिरस्तु । कर्त्ता—पञ्चसंस्कारकर्मणः श्रीरस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु । विप्राः—अस्तु श्रीः । ततः पुण्याहकलशं पूर्ववत् भूमौ निधाय पुनः प्रार्थयेत् । कर्त्ता—पुण्याहसमृद्धिरस्तु, शिवं कर्मास्तु,

प्रजापतिः प्रीयतामिति भवन्तो ब्रुवन्तु । विप्राः-
 पुण्याहसमृद्धिरस्तु , शिवं कर्मास्तु ; प्रीयतां भगवान्
 प्रजापतिः । ततः कर्त्ता कूर्चास्रपल्लवैर्बक्ष्यमाण वाक्यै पुण्या-
 हकलशाज्जलं कश्मिँश्चित् पात्रे किञ्चित्-२ निषिञ्चेत् ।
 यथा-ॐ शान्तिरस्तु । ॐ पुष्टिरस्तु । ॐ तुष्टिरस्तु ।
 ॐ ऋद्धिरस्तु । ॐ अविघ्नमस्तु । ॐ आयुष्यमस्तु ।
 ॐ आरोग्यमस्तु । ॐ धनधान्यसमृद्धिरस्तु । ॐ गोब्राह्म-
 णेभ्यः शुभम्भवतु । ईशान्यां वहिर्देशे- ॐ अरिष्टनिर-
 सनमस्तु । दक्षिणस्यां- ॐ यत् पापं रोगं तद्दूरे प्रतिहत-
 मस्तु । उत्तरे-कर्मण्यविघ्नमस्तु । ॐ उत्तरोत्तराभिवृद्धि-
 रस्तु । ॐ सर्वं शोभनमस्तु । ॐ सर्वाः सम्पदः सन्तु ।
 ॐ शुभानिवर्द्धन्ताम् । ॐ 'शान्तिः शान्तिः शान्तिः'
 "इति सर्वेब्राह्मणाः प्रतिब्रूयुः । ततो नीतं पात्रस्थं जलं
 कुम्भे- ॐ भूर्भुवः स्वरोम्" इति निश्चाव्य । आवाहितं
 वरुणं यथास्थानं प्रतिष्ठापयामि । इति वरुणमुद्रास्य
 पुण्याहकलशजलेन सर्वाणि द्रव्याणि शिष्याँश्च प्रौक्षयेत् ।
 पुनः प्राणानायम्य । पञ्चसंस्कारक्रमाङ्गं पञ्चगव्यमे-
 लनं करिष्ये । इति सङ्कल्प्य । ततो मध्ये दुग्धं, एन्द्रे

दधि, यमदिशि घृतं, उत्तरस्यां दिशि गोमये द्वे, वारुण्यां
 दिशि कुशोदकं इति क्रमेण निक्षिप्य पञ्चगव्यं सम्मेल-
 येत् । पञ्चगव्यसम्मेलनमंत्राः— ॐ आप्यायस्व समेतुते-
 विश्वतः सोम वृण्यम् । भवावाजस्य सङ्गथे । इति
 मंत्रेण क्षीरं अभिमन्त्र्य । ॐ दधिक्राव्णोऽकारिषं
 जिष्णोरश्श्वस्य व्वाजिनः । सुरभिनोमुखाकरत्प्राणऽआयुं
 षितारिषत् । इति दधि अभिमन्त्र्य । ॐ तेजोसिशुक्रमस्य-
 सृतमसिधामनामासिप्प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि ।
 इति मंत्रेणाज्यं अभिमन्त्र्य । ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां
 नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहो-
 पहवयेश्रियम् । इति मंत्रेण गोमयं अभिमन्त्र्य । ॐ
 तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि । धियो यो नः
 प्रचोदयात् । इति गायत्र्यागोमूत्रं अभिमन्त्र्य । ॐ
 देवस्यत्त्वा सवितुः प्रसवेशिष्वनोव्वाहुभ्याम्पूष्णो हस्ता-
 भ्याम् । इति मंत्रेण कुशोदकं अभिमन्त्र्य । सर्वाणि
 एकीकृत्य, प्रणवेनालोडय, द्वयमंत्रेणाभिमन्त्र्य, सूर्याय
 प्रदर्श्य, सर्वान् शिष्यान् प्राशयेत् । पञ्चगव्यप्राशन-
 मंत्राः— यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति तावके ।

(मामके) प्राशनात्पञ्चगव्यस्य दहत्वग्निरिवेन्धनम् । इति
पञ्चगव्य प्राशनम् ॥

अथरक्षाबन्धनम्— ॐ वृहत्सामक्षत्रभृदृद्धवृष्णीयं
त्रिष्टुभौजशुभित मुग्रवीरं इन्द्रस्तोमेन पंचदशेन मध्यमिदं
वातेन सगरेण रक्षा ॥१॥ (अथवा) ॐ यदाबन्धं
दाक्षायणाहिरण्यं शतानीकाय सुमनस्यमानाः । तन्मऽआ-
बन्धामि शतषारदायायुष्मान् जरदष्टिर्यथासम् ॥१॥
इति मन्त्रेण ब्राह्मणादीनां । तथा च— ॐ जितन्तेपु-
ण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन । नमस्तेऽस्तु हृषीकेश
महापुरुष पूर्वज ॥१॥ येनराजा बलिर्बद्धो दानवेन्द्रो-
महाबलः । तेन त्वा प्रतिबन्धामि रक्षे मा चल मा
चल ॥२॥ इति मन्त्रेण स्त्रीशूद्रादीनां वामहस्ते चतु-
र्गुणित प्रतिसरं बन्धयेत् । पुनः प्राणानायम्य । पंच-
संस्कारकर्मार्ज्जं सुदर्शनहोमं करिष्ये । इति सङ्कल्प्य ।
अथाग्निस्थापनम्—कर्त्ता स्थण्डिलं कल्पयित्वा मूल मन्त्रेण
स्थण्डिलं वीक्ष्य संस्कारान् कुर्यात् । यथा—प्रथमतः
स्थण्डिले तण्डुलान् विकीर्य पश्चिमत आरभ्यप्राचीपूर्व

उदकसंस्थं दक्षिणारम्भमालिरवेत् । अथोदीचीपुरः
संस्थं पश्चिमारम्भमालिरवेत् । एवं स्रुवेण दर्भमूलेन
वा लिखित्वा, तत्र दर्भानास्तीर्य्य, अद्भिरभ्युक्ष्य, तृणं
निरस्य, कांस्यपात्रस्थं कांस्यपात्रेण पिहितं यथासम्भव-
मग्निमान्तीय द्वादशाक्षरमंत्रेण प्रोक्ष्य, “ ॐ भूर्भुवः
स्वरोम् ” इति स्थण्डिले प्रतिष्ठाप्य; तस्योपरि समुदी-
पनाय समिधः प्रक्षिप्य, उत्सृज्यतेऽवोक्षणतोयशेषं, प्राक्-
तोयमन्यन्निदधात्युदग्वा । ततोऽग्निध्यायेत्— ॐ चत्वारि-
शृङ्गात्रयोऽअक्ष्यपादाद्वेशीर्षे सप्तहस्तासोऽअस्य । त्रिधा
वद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवोमर्त्या ३ ऽआविवेश ॥१॥
एषोह देव प्रदिशोनु सर्वा पूर्वोह जातः स उ गर्भेऽअन्तः
स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति
सर्वतोमुखः ॥२॥ ‘स्वाहास्वधायुताग्नये नमः’ इति
मंत्रेण पञ्चोपचारैः सम्पूज्य, कुश कण्डिकां कुर्यात् । अथ
कुशकण्डिकाकरणम्—यथा वहिः श्याच्च परिस्तराणा-
मग्निं परिस्तीर्य्य, उत्तरेणाग्निं दर्भान् संस्तीर्य्य, दर्वीं,
आज्यस्थालीं, प्रोक्षणीं, प्रणीतीं, इध्मं, इतर दर्वीं च
पङ्क्तिद्वयेऽधोमुखं सादयित्वा, प्रादेशमात्रौ साग्री द्वौदर्भौ

पवित्रीकृत्य (आयामृतः) अद्भिरभ्युक्ष्य प्रोक्षणीपात्रे
 निधाय, आयामृतः परिमाणं प्रोक्षणीसंस्कारः, पात्रं
 प्रोक्षति, उत्तानानि पात्राणि, त्रिः प्रोक्ष्यः, विसृस्येध्मं
 दर्शपूर्णमासवत् तूष्णीं, पवित्रान्तर्हिते प्रोक्षणीपात्रे अप-
 आनीय, उदग्राभ्यां त्रिरुत्पूय, समं प्राणैर्हृत्वा, उत्तरे-
 णारिन्त दर्भेषु सादयित्वा, पवित्रमादाय, आज्यस्थाल्यां
 निधाय, प्रणीतं दर्भैः प्रच्छाद्य, ततोऽग्नेर्दक्षिणतस्त्रिभि-
 र्दर्भैर्ब्रह्मासनमास्तीर्य, द्वाद्वशकुशपत्रनिर्मिते कूर्चे “ ॐ
 ब्रह्मणे नमः ” अस्मिन् सुदर्शन होमकर्मणि ब्रह्माणं
 आवाहयामि । इति ब्रह्माणं षोडशोपचारैः पूजयित्वा
 नमेत् । आज्यस्थाल्यां पवित्रान्तर्हिताया आज्यनिर्वापः,
 अग्नेः पश्चिमतः आज्यं निरूप्य, आज्यमैशान्यामुदीच्यां वा
 अङ्गारेषु निधाय, ज्वलता तृणेनावद्योत्य, द्वे दर्भग्रे
 प्रक्षिद्य, प्रक्षाल्य च, आज्यपात्रे प्रत्यस्य त्रिः पर्यग्नि-
 कृत्वा दर्भमैशान्यां क्षिपेत् । आज्यं वह्नेरवतार्य उदक्-
 दिशि, अङ्गारान् वह्नौ क्षिप्त्वा, सपवित्रेण हस्तेनाग्नेः
 प्रदक्षिणत आज्यमानीय स्वक्ष्यपुरुतः स्थापयेत् । हस्त-
 योरङ्गुष्ठकनिष्ठिकाभ्यां उदगग्रे पवित्रे गृहीत्वा आज्यां

त्रिहृत्पूय, पवित्रग्रन्थिं विस्रस्य, पवित्रमाद्भिरभ्युक्ष्य,
 प्रागग्रमग्नौ प्रहरति । येन जुहोति तदग्नौ प्रतितप्य,
 प्रोक्ष्य दध्मैः सम्मृज्य, निधाय, दधानिद्भिरभ्युक्ष्याग्नौ
 प्रहरति । ततः परिधीन् परिदधाति । यज्ञियदारुसम्पा-
 दितान् कनिष्ठिकामध्यमाङ्गुष्ठस्यूतान् स्थण्डिलाया-
 मान् परिधीन् दध्यात् । यथा—“शस्या परिध्यर्थेस्थ-
 विष्ठो मध्यमः” इति परिधिमग्नेः पश्चिमत उत्तराग्रं
 निधाय । अणीयान् द्राधीयान् ‘इति अग्नेर्दक्षिणतः पूर्वाग्रं
 परिधिं निधाय । अणिष्टोर्हृषीष्ट’ इति अग्नेरुत्तरतो
 पूर्वाग्रं परिधिं निधाय । उत्तराग्रमग्नेः पश्चमतो निहितं
 पूर्वस्थापितं मध्यमं परिधिं द्वे आधारसमिधौ उपस्पृश्य
 अग्नेः पुरस्तात् दक्षिणोत्तर क्रमेण प्रागग्रे इतरे द्वे
 आधारसमिधावादधाति । एतान् परिधीन् परिस्तरणो-
 परि अन्योन्यसंस्पृष्टान्निधाय, सव्येन पाणिना जलपात्रं
 स्पृशन् दक्षिणहस्तेन परिध्यन्तः परिस्तरणोपरि सेचनं
 कुर्यात् । तद्यथा—ॐ अदितेऽनुमन्यस्व “इति दक्षिणतः
 प्राचीनम् । ॐ अनुमतोऽनुमन्यस्व इति पश्चमत उदी-
 चीनम् । ॐ सरस्वतेऽनुमन्यस्व इति उत्तरतः प्राचीनम्

ॐ देवसवितः प्रसुव इति समन्ततः प्रागारभ्य प्रदक्षिण
क्रमेण परिसेचनं कुर्यात् । तत इध्म आज्येनाभ्यज्य,
इध्ममलंकृत्य, स्वमलंकृत्य, ब्रह्माणमलंकृत्य, अस्मिन्
सुदर्शनहोमकर्मणि ब्रह्मन्निध्ममाधास्ये इति ब्रह्माणं प्रति
ब्रूयात् । “आधत्स्व” इति प्रतिवचनं ब्रह्मणा देयम् । ततः
प्रजापतिं मनसाध्यायन् तूष्णीं घृताक्ताः पञ्चदशसमिधो
वहनौ प्रक्षिपेत् । इति कुशकाण्डिका ।

अथ हवन प्रकारः— इतरदव्याज्यमादाय “ ॐ
प्रजापतये स्वाहा ” इदं प्रजापतये न मम । इति नैऋ-
त्यादि-ईशानान्तं जुहुयात् । ततः प्रधानदव्याज्यमादाय
ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदं इन्द्राय न मम—इति वायव्या-
दाग्नेयान्तं जुहुयात् । इत्याधारौ । ॐ अग्नये स्वाहा
इदमग्नये न मम—इति अग्नेरुत्तरतो जुहुयात् । ॐ
सोमाय स्वाहा—इदं सोमाय न मम—इत्यग्नेर्दक्षिणतो
जुहुयात् । इत्याज्यभागौ । ततोऽञ्जलिं बद्धा प्रार्थयेत्—
रुद्रतेजः समुद्भूतं द्विमूर्द्धानि द्वितासिकम् । षण्मेत्रं च
चतुःश्रोत्रं त्रिपादं सप्तहस्तकम् ॥१॥ याम्यभागे
चतुर्हस्तं सव्यभागे त्रिहस्तकम् । स्रुवं स्रुचं च शक्तिं च

अक्षमालां च दक्षिणे ॥२॥ तोमरं व्यजनं चैव घृत-
पात्रं तु वामके । विश्रुतं सप्तभिर्हस्तैर्द्विमुखं सप्तजिह्व-
कम् ॥३॥ दक्षिणे च चतुर्जिह्वं त्रिजिह्वमुत्तरे मुखम् ।
द्वादशकोटिसूत्यारिव्यं द्विपञ्चाशतकलायुतम् ॥४॥ स्वाहा-
स्तधावषट्कारैरङ्कितं मेषवाहनम् । रक्तमाल्याम्बरधरं
रक्तपद्मासनस्थितम् ॥५॥ रौद्रं तु वह्निनामानमेवमग्निं
विचिन्तयेत् । इत्यग्निमुखान्तकं कृत्वा अग्निमध्ये ऋतु-
स्नाताया, इत्यादि अत्र सन्निवेशनीयम् । तद्यथा—स्व-
सूत्रोक्तविधानेनाग्निमुखान्तकं कृत्वा—अग्निमध्ये ऋतुस्ना-
तया लक्ष्म्या सह भगवतः संयोगं विचिन्त्य आहितगर्भा
लक्ष्मीं ध्यात्वा तस्या अग्नेरुत्पत्तिं चिन्तयेत् । एतदेवा-
ग्नेर्वैष्णवीकरणम् । अनेन विधिना वैष्णवाग्निः सम्प-
त्स्यते । अनन्तरं दिव्यायुधार्चनम् । ततो मूलमंत्रेण—
(ॐ नमो नारायणाय) एकाहुतिः । ततः प्रत्यक्षरेण—
(ॐ स्वाहा, ॐ नं स्वाहा, ॐ मों स्वाहा, ॐ नां स्वाहा,
ॐ रां स्वाहा, ॐ यं स्वाहा, ॐ णां स्वाहा, ॐ यं स्वाहा)
पुनर्मूलमंत्रेण षोडशाहुतिः । ततस्त्रिदेविमंत्रैः प्रत्येकं षोड-
शाहुतिः—(श्रीं श्रियै स्वाहा, श्रिया इदं न मम । भूं भूम्यै

स्वाहा, भूम्या इदं न मम । नीं नीलायै स्वाहा, नीलाया
इदं न मम) । ततः पंचदिव्यायुधमंत्रैः प्रत्येकं षोडशाहुतिः
जुहुयात् । (सुदर्शनाय हेति राजाय स्वाहा, सुदर्शनाय इदं न
मम । पाञ्चजन्याय शङ्खाधिपतये स्वाहा, पाञ्चजन्याय
इदं न मम । कौमोदक्यै गदाधिपतये स्वाहा, कौमोदक्या
इदं न मम । नन्दकाय खड्गाधिपतये स्वाहा, नन्दकाय
इदं न मम । शाङ्गाय धनुरधिपतये स्वाहा, शाङ्गाय धनुर-
धिपतये इदं न मम) । ततो वेदादिभिः प्रत्येकं चतस्रः
आहुतयः । तद्यथा-ऋग्वेदमंत्रः-ॐ अग्निमीले पुरोहितं
यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥४॥ यजुर्वेद-
मंत्रः- ॐ इषेत्त्वोर्जोत्वा व्वायवस्थ देवो वः सविता-
प्रार्पयतु श्रेष्ठुतमाय कर्मणऽआप्यायद्ध्वमग्घ्न्याऽइन्द्राय
भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा वस्तेनऽईशतमाघशं
सोध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात व्वह्वीर्यजमानस्य पशून्
पाहि ॥४॥ सामवेदमंत्रः- ॐ अग्नऽआयाहि वीतये गृणानो
हव्यदातये । निहोता सत्सि बर्हिषि ॥४॥ अथर्वणवेदमंत्रः-
ॐ शन्नो देवीरमीष्टयऽआपो भवन्तु पीतये । शँय्योरमि-
स्रवन्तु नः ॥४॥ ततो विष्णुगायत्र्या तिस्रः आहुतयः ।

(ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्) । ततो विष्णुसूक्तिभिर्जुहुयात् । तद्यथा— ॐ विष्णोर्भुक्तं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजां सि । योऽस्कभायदुत्तरं सधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधो रुगायोविष्णवेत्वा स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥१॥ ॐ विष्णो रराटमसि विष्णोः पृष्ठमसि विष्णोः इनप्रे- स्थः । विष्णवे स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवमसि विष्णवमसि विष्णवेत्वा स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥२॥ ॐ तदस्य प्रिय मपि पाथोऽस्यां नरो यत्र देवयवो मदन्ति । उरुक्रमस्य सहि बन्धुरित्था विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥३॥ ॐ प्रतद्विष्णु- स्तवते वीर्याणि मृगो नभीमः कुचरो गिरिष्ठाः । चस्यो- रुषु विचक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥४॥ ॐ परो मात्रया तनु वा बृधान न ते महित्व मन्वश्नुवन्ति । उभे ते विद्म रजसी पृथिव्याविष्णोर्देवत्वं परमस्य वित्से स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥५॥ ॐ विचक्रमे पृथिवीमेष एतां क्षेत्राय विष्णुर्मनुषेदशस्थन् । ध्रुवासोऽस्य कीरयो जनास उरु-

क्षितिं सुजानि मा चकार स्वाहा । विष्णवे इदं न
 मम ॥६॥ ॐ त्रिदेवः पृथिवी मेष एतां विचक्रमे शत-
 वर्चसं महि त्वा । प्रविष्णुरस्तु तवसस्तवीयान् त्वेषं
 ह्यस्य स्थविरस्य नाम स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥७॥
 ॐ अतोदेवाऽऽवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे । पृथिव्या
 सप्तधामभिः स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥८॥ ॐ
 इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्यपां
 सुरे स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥९॥ ॐ त्रीणि पदा
 विचक्रमे विष्णुर्गोपाऽअदाभ्यः । अतो धर्माणि धारयन्
 स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥१०॥ ॐ विष्णोः
 कर्माणि पश्यत यतो ब्रतानि पस्पशे । इन्द्रस्य युज्यः
 सखा स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥११॥ ॐ तद्विष्णोः
 परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीवः चक्षुराततम्
 स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥१२॥ ॐ तद्विप्रासो विप-
 न्यवो जागृवां सः समिन्धते । विष्णोर्यत्परमं पदम्
 स्वाहा । विष्णवे इदं न मम ॥१३॥ ॐ पूर्वाय वेधसे न
 वीयसे सुमज्जानवेविष्णवे दधाति । यो जात यस्य
 पहतो महिभ्रात्सेदुः श्रवोभिर्युज्य चित्भ्यस्सत् स्वाहा ।

विष्णवे इदं न मम ॥१४॥ ॐ तमस्तोतारः पूर्वं यथाविद
 ऋतस्य गर्भं हविषा विवर्त्तना । आस्य जानन्तो नाम
 द्विवर्त्तना बृहते सुमतिं भजामहे स्वाहा । विष्णवे इदं न
 मम ॥१५॥ ततः पुरुषसूक्ते प्रत्यर्चं स्वाहान्तहोमः ।
 तद्यथा- ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स
 भूमिं सर्वतस्पृत्त्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् स्वाहा । पुरुषाय-
 नारायणाय इदं न मम ॥१॥ ॐ पुरुषऽएवेदं सर्वं यद्भूतं
 यच्च भाव्यम् । उतामृतत्वस्येशानोयदन्नेनातिरोहति
 स्वाहा । पुरुषाय नारायणाय इदं न मम ॥२॥ ॐ एता-
 वानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरुषः । पादोस्य विश्वा
 भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि स्वाहा । पुरुषाय नारायणाय
 इदं न मम ॥३॥ ॐ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोस्येहा
 भवत्पुनः । ततोविष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशनेऽभि स्वाहा
 पुरुषाय नारायणाय इदं न मम ॥४॥ ॐ ततो विवराड-
 जायत विवराजोऽधिपुरुषः । स जातोऽत्यरिच्यत-
 पश्चाद्भूमिमथो पुरः स्वाहा । पुरुषाय नारायणाय इदं
 न मम ॥५॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्ज्यम् ।
 पशूंस्ताँश्चक्रे व्वायव्यानारण्या ग्राम्याम्च ये स्वाहा ।

पुरुषाय नारायणाय इदं न मम ॥६॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्स-
 र्व्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे । छन्द्वां सि जज्ञिरे तस्मा-
 द्यजुस्तस्मादजायत स्वाहा । पुरुषाय नारायणाय इदं न
 मम ॥७॥ ॐ तस्मादश्वाऽअजायन्त ये के चोभयादतः ।
 गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः स्वाहा ।
 पुरुषाय नारायणाय इदं न मम ॥८॥ ॐ तं यज्ञम्बर्हिषि
 प्रौक्षन्पुरुषज्जातमग्रतः । तेन देवाऽअयजन्त साद्ध्याऽऋ-
 षयश्च ये स्वाहा पुरुषाय नारायणाय इदं न मम ॥९॥
 ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् । मुखद्वि-
 मस्यासीत्किम्बाहू किमूरु पादाऽउच्येते । स्वाहा । पुरुषाय
 नारायणाय इदं न मम ॥१०॥ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासी-
 द्बाहू राजन्यः कृतः । ऊरु तदस्य यद्ब्रह्मण्यः पद्भ्यां शूद्रो-
 ऽअजायत स्वाहा । पुरुषाय नारायणाय इदं न मम ॥११॥
 ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षुः सूर्योऽअजायत ।
 श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत स्वाहा ।
 पुरुषाय नारायणाय इदं न मम ॥१२॥ ॐ नाबभूव-
 ऽआसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत । पद्भ्याम्भूमि-
 दिशः श्रोत्रात्तथा लोकांश्चऽअकल्पयन् स्वाहा । पुरुषाय

नारायणाय इदं न मम ॥१३॥ ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा
 यज्ञमतन्वत । व्वसन्तोऽस्या सीदाज्ज्यङ्ग्रीष्मऽइधमः शर-
 द्वविः स्वाहा पुरुषाय नारायणाय इदं मम ॥१४॥ ॐ
 सप्ताश्यासन्परिधयस्त्रिः सप्तसमिधः कृताः । देवायद्य-
 जन्तन्त्वानाऽअवन्धन्पुरुषम्पशुम् स्वाहा । पुरुषाय नाराय-
 णाय इदं न मम ॥१५॥ ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि
 धर्माणि प्रथमान्यासन् । तेहनाकम्महिमानः सचन्त यत्र
 पूर्वे सादृचाः सन्ति देवाः स्वाहा । पुरुषाय नारायणाय
 इदं न मम ॥१६॥ ततः—ॐ वासुदेवाय स्वाहा । “वासु-
 देवाय इदं न मम । ॐ केशवाय स्वाहा” केशवाय इदं न
 मम । ॐ दामोदराय स्वाहा । दामोदराय इदं न मम ।
 मन्त्र रत्ने (श्रीमन्नारायणचरणौ शरणं प्रपद्ये श्रीमते
 नारायणाय नमः) । अष्टोत्तरशतं, अष्टाविंशतिः वा
 आहुतिर्हुत्वा । स्वाराधिताय स्वगृहार्चा भूताय भगवते
 तन्नाम्ना अष्टोत्तरशतं वा यथासंख्याकपरिमितं
 आहुतयः । तदनन्तरं अग्नौ सुदर्शनं पाञ्चजन्यं च विन्य-
 स्य अर्घ्यादिभिः षोडशोपचारैरभ्यर्च्य । सुदर्शनं गृहीत्वा
 शिष्यस्य दक्षिण भुजमूले—ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा

निदधेपदम् । समूढमख्यपां सुरे स्वाहा (१) सुदर्शनमहा-
ज्वालाकोटिसूर्य्यसमप्रभ । अज्ञानान्धस्य मे देव विष्णो मर्नि
प्रदर्शय । २ । इति शिष्यं वाचयित्वा अङ्कयेत् । ततः पाञ्च-
जन्यं गृहीत्वा शिष्यस्य बामभुजमूले—ॐ अग्निर्ऋषिः
पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महा गयम् । १
पाञ्चजन्यनिजध्वानध्वस्तपातकसञ्चय । पाहि मां पापिनं
घोरं संसारार्णव पातिनम् । इति शिष्यं वाचयित्वा अङ्कयेत् ।
अथानन्तरं सुदर्शनं पाञ्चजन्यं च पयसा संस्नाप्य, शुद्धो-
दकेन स्नाप्य च निधाय, पूर्ववत् गन्धादिभिः पञ्चोप-
चारैः (गन्धः, पुष्पः, धूपः, दीपः, नैवेद्यः) सम्पूज्य
दिव्यायुधसानिध्यं प्रार्थयेत् । अनन्तरं शिष्यं विधिवत्
उर्ध्वपुण्ड्रान् धारयित्वा तन्नामोच्चारणपूर्वकं अञ्जलि
कारयेत् । अथ शिष्यस्य दास्यनाम च कृत्वा, गुरुपरम्प-
रापूर्वकं, मूलमंत्रं, मंत्ररत्नं, चरमश्लोकांश्चोपदिश्य वाच-
यित्वा—(अस्मद्गुरुभ्यो नमः । अस्मत्परमगुरुभ्यो नमः ।
अस्मत्सर्वगुरुभ्यो नमः । श्रीमतेरामानुजाय नमः । श्री
पराङ्कुशदासाय नमः । श्रीमद्यामुन मुनये नमः । श्रीराम-
मिश्राय नमः । श्रीपुण्डरीकाक्षाय नमः । श्रीमन्नाथमुनये

नमः । श्रीमते शठकोपाय नमः । श्रीमते विष्वक्सेनाय
 नमः । श्रियै नमः । श्रीधराय नमः । इति गुरुपरम्परात्मकं
 त्रयोदश वाक्यम्) । मूलमंत्रः — (ॐ नमो नारायणाय) ।
 मन्त्र रत्नम्—(श्रीमन्नारायणचरणौ शरणं प्रपद्ये श्रीमते
 नारायणाय नमः) । चरमश्लोकः—(सर्वधर्मान् परित्यज्य
 मामेकं शरणं ब्रज । अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि
 मा शुचः) । तदनन्तरं जयादींश्च कुर्यात् । अथवा जयाऽ-
 भ्यातनराष्ट्रभृद्-होमस्थाने श्रीमदष्टाक्षरमन्त्रेण ५४ चतुः
 पञ्चाशद्बारं होमं कुर्यात् । अथ जयासंज्ञकास्त्रयोदश
 मन्त्राः—ॐ चित्तं च स्वाहा, चित्ताय इदं न मम ॥१॥
 चित्तिश्च स्वाहा, चित्त्यै इदं न मम ॥२॥ आकूतं च
 स्वाहा, आकूताय इदं न मम ॥३॥ ॐ आकूतिश्च
 स्वाहा, आकूत्यै इदं न मम ॥४॥ ॐ विज्ञातञ्च स्वाहा,
 विज्ञाताय इदं न मम ॥५॥ ॐ विज्ञातिश्च स्वाहा, विज्ञात्यै
 इदं न मम ॥६॥ ॐ मनश्च स्वाहा, मनसे इदं न मम
 ॥७॥ ॐ शक्वरीश्च स्वाहा, शक्वरीभ्यो इदं न मम ॥८॥
 ॐ दर्शश्च स्वाहा, दर्शाय इदं न मम ॥९॥ ॐ पौर्णमास-
 ञ्च स्वाहा, पौर्णमासाय इदं न मम ॥१०॥ ॐ वृहच्च

स्वाहा, बृहते इदं न मम १११। ॐ रथन्तरं च स्वाहा,
 रथन्तराय इदं न मम ११२। ॐ प्रजापतिर्जयानिन्द्राय वृष्णे
 प्रायच्छदुग्रः पृतनाजयेषु । तस्मै विशः समनमन्तः सर्वाः
 स उग्रः स इहव्यो बभूव स्वाहा, प्रजापतये जयानिन्द्राय
 इदं न मम ११३।

अथाभ्यातानसंज्ञकाऽष्टादशमंत्राः—(इहाभ्यातानहोमे-
 समावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामा शिष्यस्यां पुरो-
 धायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहृत्यां स्वाहा, इति सर्वत्रा-
 नुषजाति)। ॐ अग्निर्भूतानामधिपतिः—अग्निर्भूतानामधिपतये
 इदं न मम ११। ॐ इन्द्रो ज्येष्ठानामधिपतिः— इन्द्राय
 ज्येष्ठानामधिपतये इदं न मम १२। ॐ यमः पृथिव्याना-
 मधिपतिः—यमाय पृथिव्यानामधिपतये इदं न मम १३।
 ॐ वायुरन्तरिक्षस्याधिपतिः—वायवेऽन्तरिक्षस्याधितये इदं
 न मम १४। ॐ सूर्यो दिवोऽधिपतिः—सूर्याय दिवोऽधि-
 पतये इदं न मम १५। ॐ चन्द्रमा नक्षत्राणामधिपतिः—
 चन्द्रमसे नक्षत्राणामधिपतये इदं न मम १६। ॐ बृहस्पति-
 र्ब्रह्मणोऽधिपतिः—बृहस्पतये ब्रह्मणोऽधिपतये इदं न मम १७।
 ॐ वरुणोऽपामधिपतिः—वरुणायापामधिपतये इदं न मम

१९। समुद्रः स्रोत्यानामधिपतिः—समुद्राय स्रोत्यानामधिप-
 तये इदं न मम १९०। ॐ अन्नं साम्राज्यानामधिपतिः—
 अन्नायसाम्राज्यानामधिपतये इदं न मम १९२। ॐ सोम
 ओषधीनामधिपतिः—सोमायौषधीनामधिपतये इदं न मम
 १९१। ॐ सविता प्रसवानामधिपतिः—सवित्रे प्रसवानाम-
 धिपतये इदं न मम १९३। ॐ रुद्रः पशूनामधिपतिः—रुद्रा-
 यपशूनामधिपतये इदं न मम १९४। ॐ त्वष्टारूपाणाम-
 धिपतिः—त्वष्ट्रे रूपाणामधिपतये इदं न मम १९५। ॐ
 विष्णुः पर्वतानामधिपतिः—विष्णवे पर्वतानामधिपतये इदं
 न मम १९६। ॐ मरुतो गणानामधिपतयस्ते—मरुद्भ्यो
 गणानामधिपतिभ्यो इदं न मम १९७। ॐ पितरः पिता-
 महाः परेऽवरेततास्ततामहा इह—पितृभ्यः परेभ्योऽवरेभ्य-
 श्च इदं न मम १९८। अथ राष्ट्रभृद्धोमद्वादशमंत्राः— ॐ
 ऋताषाड् ऋतधामाग्निर्गन्धर्वः स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु
 तस्मै स्वाहा, ऋतासाहे ऋतधान्मेऽग्नये गन्धर्वाय इदं
 न मम १९१। ॐ ऋताषाड् ऋतधामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषध-
 योऽप्सरसो मुदो नाम ताभ्यः स्वाहा, औषधीभ्योऽप्स-
 रोभ्यो मुद्भ्यो इदं न मम १२। ॐ सं हितो विश्व-

सामा सूर्यो गन्धर्वः स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै
 स्वाहा वाट ताभ्यः स्वाहा । सं हितो विम्बसामा-
 सूर्यो गन्धर्वाय इदं न मम ।३। ॐ सं हितो विश्व-
 सामा सूर्यो गन्धर्व स्तस्य मरीचयोऽप्सरसऽआयुवो नाम
 ताभ्यः स्वाहा; मरीचिभ्योऽप्सरोभ्य आयुभ्यो इदं न
 मम ।४। ॐ सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वः स न
 इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा, वाट्ताभ्यः स्वाहा,
 सुषुम्णाय सूर्यरश्मये चन्द्रमसे गन्धर्वाय इदं न मम
 ।५। ॐ सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वस्तस्य नक्षत्रा-
 ण्यप्सरसो भेकुरयो नाम ताभ्यः स्वाहा, नक्षत्रेभ्योऽप्स-
 रोभ्यो भेकुरयो इदं न मम ।६। ॐ इषिरो विश्वव्य-
 चा वातो गन्धर्वः स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै
 स्वाहा वाट्, ताभ्यः स्वाहा । इषिराय विश्वव्यचसे
 वाताय गन्धर्वाय इदं न मम ।७। ॐ इषिरो विश्वव्य-
 चावातो गन्धर्वस्तस्यापोऽप्सरस ऊर्जो नाम ताभ्यः
 स्वाहा, अद्भ्योऽप्सरोभ्यऽऊर्गभ्यो इदं न मम ।८। ॐ
 भुज्युः सुपर्णो यज्ञो गन्धर्वः स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु
 तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा, भुज्यवे सुपर्णाय

यज्ञाय गन्धर्वाय इदं न मम ॥९१॥ ॐ भुज्युः सुपर्णो यज्ञो
 गन्धर्वस्तस्य दक्षिणाऽप्सरसस्तावा नाम ताभ्यः स्वाहा,
 दक्षिणाभ्योऽप्सरोभ्यस्तावाभ्यो इदं न मम ॥९०॥ ॐ
 प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनो गन्धर्वः स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु
 तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा, प्रजापतये विश्वकर्माणे
 मनसे गन्धर्वाय इदं न मम ॥९१॥ ॐ प्रजापतिर्विश्व-
 कर्मा मनो गन्धर्वस्तस्यऽऋक्सामान्यप्सरसऽष्टयो
 नाम ताभ्यः स्वाहा, ऋक्सामभ्योऽप्सरोभ्यऽष्टिभ्य इदं
 न मम ॥९२॥ ततः स्विष्टकृद्धोमः—ॐ अग्नये स्विष्ट-
 कृते स्वाहा, अग्नये स्विष्टकृते इदं न मम । ततः प्रायश्चित्त-
 होमः अथवा प्रायश्चित्तहोमस्थाने केशवादिद्वादशमन्त्रेण
 होमं कुर्यात् । ॐ भूः स्वाहा, अग्नये इदं न मम । ॐ भुवः
 स्वाहा, वायवे इदं न मम । ॐ स्वः स्वाहा, सूर्याय इदं
 न मम । ॐ त्वन्नो अग्ने व्वरुणस्य विवद्वान् देवस्य हेडो
 अवयांसि सीष्ठाः । यजिष्ठो व्वह्नितमः शोशुचानो विव-
 श्वाद्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा, अग्नीवरुणाभ्यां इदं न
 मम ॐ सत्वन्नो अग्ने वमो भवोतीनेदिष्ठो अस्या उषसो
 व्युष्टौ अवयक्ष्वनो व्वरुणं रुराणो व्वीहि मृडीकं सुहवो

न एधि स्वाहा, अग्नीवरुणाभ्यां इदं न मम । ॐ अया-
 श्चाग्ने स्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्व मया असि ।
 अयानो यज्ञं वहस्ययानो धेहि भेषजं स्वाहा, अग्नये
 अयसे इदं न मम । ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः
 पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोतविष्णुर्वि-
 श्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा, वरुणाय सवित्रे
 विष्णवे विश्वेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च इदं न मम । ॐ
 उदुत्तमं वरुणपाशमश्मदवाधमं विमध्यमं श्रथाय । अथा-
 वयमादित्यव्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा; वरु-
 णायादित्यायादितये इदं न मम । ॐ प्रजापतये स्वाहा,
 प्रजापतये इदं न मम । इति प्रायश्चिद्धीमः । एवं होमं
 समाप्य तदनन्तरं परिध्यञ्जनम्, परिधीनामग्नौप्रहर-
 णम् । ब्रह्मोद्वासनं च कुर्यात् । अग्न्युपस्थानं च
 कृत्वा-तद्यथा- ॐ यज्ञ यज्ञङ्गच्छ यज्ञपतिङ्गच्छ स्वां
 योनिङ्गच्छ स्वाहा । एष ते यज्ञो यज्ञपते सह सूक्तवाकः
 सर्वं वीरस्तञ्जुषस्व स्वाहा ॥१॥ गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ
 स्वस्थाने परमेश्वर । यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ
 हुताशन ॥१॥ चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पञ्चभिरेव च ।

हूयते च पुनर्द्वाभ्यां तस्मै यज्ञात्मने नमः ॥२॥ यज्ञनारा-
यण स्वस्थाने गच्छ । ततोऽग्निमध्यस्थं भगवन्तमुद्वास-
येत् । इति अग्निविसर्जनम् ॥

॥ अथ शरणागतिः ॥

अथानन्तरमाचार्योभगवत्सन्निधौ गत्वा शिष्य-
स्य दीर्घप्रणामं कारयित्वा, स्वयमपि भगवन्तं साष्टाङ्गं
प्रणम्य, उत्थाय भगवत्सन्निधौ गुरुपरम्परापूर्वकं मूल-
मंत्रं, मंत्ररत्नं, चरमश्लोकमनुसन्धाय—कालत्रयेऽपि कर-
णत्रय निर्मितातिपापक्रियस्य शरणं भगवत् क्षमैव । सा
च त्वयैव कमलारमणेऽर्थिता यत् क्षेमः स एवहि यतीन्द्र
भवच्छ्रितानाम् ॥१॥ इति श्लोकमनुसन्धाय, भगवद्रामा-
नुजाचार्यानुष्ठितामेवप्रपत्तिं तदर्थं स्मरेत् । यथा— ॐ
भगवन्नारायणाभिमतानुरूपस्वरूपगुणविभवैश्वर्यं शी-
लाद्यनवधिकातिशयासंख्येय कल्याणगुणगणां पद्मवना-
लयां भगवतीं श्रियं देवीं नित्यानपायिनीं निरवद्यां देव-
देवदिव्यमहिषीमखिलजगन्मातरमश्मन्मातरमशरण्यश-
रण्यामनन्यशरणः शरणमहं प्रपद्ये ॥१॥ तदनन्तरम्—
त्वं माता सर्वलोकानां सर्वलोकेश्वर प्रिये । आश्रयस्वेष्व-
रमिममपराधशतैर्यूतम् ॥१॥ श्रीवेङ्कटेशदयितां श्रियं
षट्क भावतः समाश्रित्य वृषाद्रीश चरणौ शरणं श्रये ॥१॥

नारायणदयासिन्धो वात्सल्य गुणसागर । एनं रक्ष जगन्नाथ
 बहुजन्मापराधिनम् ॥१॥ ॐ मनोवाक्कायैरनादिकालप्र-
 वृत्तानन्ताकृत्यकरण कृत्याकरण भगवदपचारभागवताप-
 चारासह्यापचाररूपनानाविधानन्तापचारानारब्धकार्या-
 ननारब्धकार्यान् कृतान् क्रियमाणान् करिष्यमाणान्श्च
 सर्वानिषेधतः क्षमस्व ॥१॥ इत्यादि चूणिकामनुसन्धाय,
 शिष्यस्य भवं भगवत्पादाब्जयोन्यसेत् । इति शरणागतिः ।
 तत्पश्चात् शिष्यउत्थाय आचार्याय यथा विभवं वसनभू-
 णादिकं समर्प्य, सम्भावितानां श्रीवैष्णवानां यथाशक्ति
 दक्षिणां समर्पयेत् ।

अथोपदेशः—तद्यथा—आचार्यः शिष्यस्य वृत्ति आदिशेत् ।
 नित्यं भगवत्कैकर्यपरो भव; भागवतान् आचार्यतुल्यान्
 मन्यस्व, अन्यान्पि व्रतादीन् आदिशेत्, शिष्यस्तथेतिप्रति-
 ब्रूयात् । इति पञ्चसंस्कारपद्धतिः समाप्ता । श्रीः । श्रीः ।
 श्री शुभसम्बत् २०२० तत्र शकः १८८५ ज्यैष्ठमासि शुक्ल
 पक्षे वृहस्पतिवासराश्विनायां चतुर्दश्यां तिथौ अनुराधा
 नक्षत्रे कन्यालग्ने समाप्तेयं पञ्चसंस्कार पद्धतिः ।

(श्री पं० दामोदर रामानुज श्रीनिवास दास) दामोदर
 सुकुल शास्त्री श्री विजयराघवामन्दिर श्रीअयोध्याजी

॥ शुभम्भूयात् ॥

कम्प्यूटर कम्पोजिंग, स्क्रीन प्रिंटिंग एवं लेटर
प्रिंटिंग से उत्कृष्ट धार्मिक पुस्तकों एवं
शादी कार्ड; मुण्डन कार्ड, विजिटिंग
कार्ड, लेटर पैड व राम नाम
की कापी की सुन्दर छपाई
के लिए पधारें ।



सत् साहित्य प्रकाशन

तुलसीनगर, अयोध्या

फैजाबाद

☎ (०५२७८) ३२४३७